****************************************************

## तीसरा अध्याय : 'भँवर' का नाट्य - शिल्प

प्रस्तावना, 'भँवर' का नाट्य-शिल्प, कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, प्रतिभा, प्रो.ज्ञान, जगन, हरदत्त, प्रो.नीलाभ, संवाद या कथोपकथन, देश-काल-वातावरण, अभिनेयता, भाषाशैली, शीर्षक, उद्देश्य ।

****************************************************

## प्रस्तावना :

शिल्प - विधि अंग्रजी के टेक्नीक शब्द का हिंदी रुपांतर है । हिंदी साहित्य में शिल्प - विधि के लिए रचना-तंत्र, रचना - विधान, रचना पध्दति, शिल्प - विधान आदि शब्द प्रयुक्त होते है । कोई कृतियाँ जिन रीतियों और पध्दतियों के द्वारा लिखी जाती है उन्हें समग्रता से शिल्प - विधि कहा जाता है ।

साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा नाटक में शिल्प का महत्व अधिक है । पद्य में और गद्य में जो अनेक साहित्य रुप हैं वे विभिन्न भाषाओं में रचे जाते है, उनमे सबसे अधिक माँग करनेवाला नाटक हैं । नाटक में शिल्प की महत्ता के कई कारण हैं । नाटक यह एक दृश्यकाव्य हैं । नाटककार को हमेशा इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि उसकी कृति में केवल वही वस्तु आये जिसका प्रदर्शन हो सके । चूँकि नाटक प्रदर्शन का उद्देश्य मनोरंजन के साथ-साथ जन-मानस को जागृत करना हैं, अतः नाटककार को दर्शकों की बोध-शक्ति का भी ध्यान रखना पडता है । जिसके कारण अपनी कृति दर्शकों पर प्रभाव उत्पन्न कर सके । रंगमंच भी नाटक की एक सीमा है । नाटककार को रंगमंच के सीमित स्थान को ध्यान में रखकर, सबकुछ प्रस्तुत करना पडता हैं । रंगमंच के लिए सिर्फ नाटक लिखना चाहिए ऐसा भी कुछ नहीं है । नाटककार को समय की अवधि का भी ध्यान रखना पड़ता है । नाटक निश्चित समय में ही अभिनीत हो इसलिए नाटककार अवधि का भी विचार करता है । नाटककार अपनी कृति में कथा को समाज, पुराण, विज्ञान, और कुरीतियों पर व्यंग्यात्मक कथासूत्र चुनता है । पात्रों को भी उसी क्षेत्र से चुनकर उनमें भावों की मुक्ता भर देता है जिसके कारण बेजान दिखाई देनेवाले पात्र संजीव हो जाते हैं । नाटक में कथोपकथन या संवाद भी बहुत सुंदर ढंग से लिये जाते हैं । चुस्त, चुटीले और प्रभावोत्दक संवाद से कृति श्रेष्ठ बन जाती है । नाटक में देश - काल - वातावरण का भी उपयोग

उपयोग किया जाता हैं । नाटक में कथासूत्र, संवाद, पात्र आदि सब-कुछ होते हुऐ भी भाषा शैली के बीना नाटक निर्जीव सा लगने लगेगा । नाटक का उददेश्य महान और मंगलदायक होना चाहिए । उददेश्य में बुरी प्रवृत्तियों पर प्रहार और सद्प्रवृतियों को प्रोत्साहन होना चाहिए ।

## " भँवर ' का नाट्यशिल्प "

' भँवर ' उपेंद्रनाथ ' अश्क ' द्वारा सन 1961 में लिखा गया नाटक है । भँवर ' अश्क ' का समस्या प्रधान नाटक है । इस नाटक में उन्होंने नारी के मनोविज्ञान को स्पष्ट किया है । पाश्चात्य शिक्षा ने भारतीय युवती को विभ्रम में डाल दिया हैं । वह स्वयं को समझने में आज असफल हो रही हैं । प्राचिन संस्कारों और रुढियों के कारण नारी पुरुष की ज्यादती का शिकार बन गयी थी । उच्च शिक्षिता नारी इन ज्यादतियों से बचने का प्रयास ही नही करती बल्कि उन समस्त स्वच्छन्दतओं की मांग करती है जिसका आज तक पुरुष वर्ग अनुचित लाभ उठाता रहा । लेकिन जब उसके उर्ददृश्य मे व्यवधान आता है तब वह गहन कुण्ठाओं का शिकार बन जाती है । यही प्रवृत्ति नारी जीवन को विषाक्त बना देती है । ' अश्क ' ने इस नाटक में ऐसै ही एक युवती का चित्रण किया है ।

' अश्क ' जी ने भँवर का वस्तुचयन मध्यवर्गीय समाज से किया है । इस नाटक के सृजन के संबंध मे अश्क जी ने ' मैं नाटक कैसे लिखता हूँ ' नामक लेख में सुंदर और रोचक विवरण दिया है - " जब मैं दिल्ली में था तो मैंने तीन लडकियों को देखा । उनमें दो हिंदु थी और एक मुसलमान, उनके जीवन की उलझन और व्यग्रता मुझे बडी हद तक एक-सी लगी ।

1) तीनों अभिजात वर्ग की थी ।

2) तीनों उच्चशिक्षिता थीं, एक इंग्लिस्थान हो आयी थीं, दूसरी एम.ए. मे फर्स्ट रही थीं, तीसरी इंग्लिस्थान जा रही थीं । तीनों खुद को बुध्दिवादी मानती, थीं ।

3) तीनों ने यौवनारम्भ में ही प्यार किया था, लेकिन भिन्न कारणों से अपना जीवन - साथी न बना पायी थीं ।

4) उस पहले प्यार के पश्चात् शादी की लेकिन पतियोंसे छोड दिया ।

5) तीनों में वैवाहिक असफलता के कारण विचित्र आकर्षण भर गया था । कभी खिलखिलाती है, कभी असन्तुष्ट, तो कभी कुण्ठाओं से भरी ।

6) इनके इस विचित्र आकर्षण पर कोई अपने प्राण गँवा रहे थे, पर वे स्वयं भी अपने - आप जलनेवाली दीप शिखा की भाँति सुलग रही थी ।

इन तीनों पात्रों ने अश्क जी के मन में कथा वस्तु का बीज बोया । इसी कारण ' भँवर ' की धूरी प्रतिभा का जन्म हुआ । फिर भी इन तीनों पात्रों के बावजूद भी ' भँवर' में एक प्रकार का निरालापन है । स्त्री पात्र हमेशा पुरुष के लिए एक चुनौती रहा है लेकिन अश्क जी ने उसे बहुत ही सुक्ष्मता से चित्रित किया है । आधुनिक शिक्षा के कारण नारी जीवन में किसप्रकार कुण्ठाएँ घुल-मिल रही हैं । साथ ही उसके दुष्परिणाम क्या होते हैं यह भी दिखाया है । अश्क जी ने नारी जीवन का अध्ययन बहुत ही नजदीक से किया है , उसे देखा है, परखा है और जाँच कर ही अपने कृति में स्थान दिया है ।

**क था व स्तु :**

' भँवर ' नायिका प्रधान नाटक है । ' प्रतिभा ' नाटक की धुरी है जिसके चारों ओर सभी पात्र चक्राकार घुमते है । वह एक अवकाश - भोगी अभिजात वर्ग की ऐसी कुण्ठित लडकी है जो बरबस बौधिकता का नकाब ओढे हुए जीवन की सभी सामान्यताओं के प्रति तीव्र विरक्ति का अनुभव करती है । ' प्रतिभा ' को जीवन की सभी सुख - सुविधाएँ उपलब्ध है - धनी घर की है, खूब शिक्षित है, रुपवती है और प्रशंसकों से घिरी

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR

हुई हैं, लेकिन वह बेहद ऊबी हुई है, दुनिया से और अपने आपसे ।"[1] उसके इस असंतोष का कारण प्रथम प्रेम की असफलता है । प्रतिभा अपना प्रथम प्रेम निवेदन दर्शनशास्त्र के प्रो.नीलाभ से करती है । प्रो. नीलाभ स्वयं असंतोष के कारण विरक्त हो गये है । अपने अध्यापन जीवन के प्रारंभ में उन्होंने अपनी एक छात्रा से विवाह कर लिया था । इस दाम्पत्य जीवन के कटु अनुभवों ने उनके जीवन में एक नया मोड ला दिया । ऐसा कहें कि वे नारी-मात्र से ही विरक्त हो गये । और उन्होने अपना शेष जीवन अध्ययन-अध्यापन के लिए समर्पित कर दिया ।

चौबीस-पच्चीस वर्ष की सुंदर युवती प्रतिभा जब प्रथम प्रेम निवेदन में असफल हो जाती हैं तो वह अपने सहपाठी सुरेश से विवाह कर लेती है । सुरेश टेंनिस का माना हुआ खिलाडी है । वह भी सुंदर व संपन्न घरका है । लेकिन दोनों में बौध्दिक समानता न होने के कारण छः महीने की तनातनी के बाद विवाह बन्धन से मुक्त हो जाते है । ठीक एक साल बाद सुरेश अपनी दुसरी शादी सहपाठिनी शकुंतला के साथ करके सुख से रहता है । किन्तु प्रतिभा ऐसा कर न सकी, क्योंकि उसके मन में असफल प्रेम की निराशा ग्रथि बन चुकी थी । प्रतिभा अकेली रह जाती है । प्रतिभा अपने जीवनसाथी की इतनी ऊँची कल्पना लिए हुए है जिसकी प्राप्ति अत्यंत कठिन है । प्रतिभा ने प्रत्येक कार्य - व्यापार पर प्रो. नीलाभ के व्यक्तित्व का आत्मीकरण करते हुऐ अपने व्यक्तित्वमें बौध्दिकता का आरोपण कर लिया हैं । यद्यपि उसकी प्रकृति बौध्दिकता के अनुकूल नहीं है, फिर भी वह अपने आपको महान बुध्दिवादिनी मानती है । लेकिन वास्तव में वह ज्ञान के क्षेत्र में कोरी हैं । जीवन की भाग-दौंड से परेशान, त्रस्त और कुण्ठांओं से भरी हुई है । प्रतिभा ऐसे ठोस तलाश में हैं जो प्रो. नीलाभ की पूर्ति कर सके । इसलिए वह अपने आस-पास, प्रदीप, नारायण विश्वा, नगेंद्र, हरदत्त, ज्ञान, जगन, निर्मल आदि को मँडराने के लिए विवश कर देती है,

---

1. सुरेंद्र पाल - भँवर : एक विवेचनात्मक परिचय पृ.स.-12

किन्तु उसका मन ठोस अवलंब की तलाश में निराशा भरे भटक रहा हैं । वह विवशता और कुण्ठाओं से भरकर कहती है - " ओह.... ओ ? कितना बड़ा शून्य हैं यह जीवन ।। कहीं भी तो कोई ऐसी चीज नहीं जो ठोस हो, जिसका सहारा लिया जा सके ।"[2]

जीवन भँवर में पड़ी हुऐ प्रतिभा दूसरों को डूबाने के साथ-साथ स्वयं भी डूबती है । अपने असामान्य जीवन से वह भली-भाँति परिचित है, इसलिए वह बार-बार सामान्य जीवन को अपनाने का प्रयास करती है किन्तु सफल नहीं हो पाती । इसी कमजोरी को प्रकट करते हुए वह कहती है - " मेरा बस चले तो मैं कहीं एक किनारे बैठकर अपनी उसी सुंदर और पवित्र दुनिया के सुख सपने में अपना सारा जीवन बिता दूँ, पर इस समाज में ऐसा संभव नहीं, सो मैं सबसे मिलती हूँ, लेकिन कमल के पत्ते की तरह - पानी में रहकर भी उससे उपर ।"[3] सभी के साथ प्यार का बहाना करती है लेकिन किसी के साथ भी प्रेम नही करती । इसलिए लोगों को प्यार के पानी में रखती है लेकिन अपना अस्तित्व कमल के पत्ते की तरह अलग रखती है । बुध्दिवाद का नकाब ओढणे के कारण वह किसी से आत्मीयता प्राप्त नहीं कर सकती । वह स्वेच्छा से रहना पसंद करती हैं । उसे न हल्का संगीत पसंद आता है न फिल्मी गीत, सभी पर व्यंग करती है - " बेहद छोटा और सँकरा है घेरा इनके जीवन का - बस उसी में घूमें जाते हैं - दिन रात उसी में घूमे जाते है - बाहर निकलने की जरा भी कोशिश नहीं करते । कोई कुंलाच नहीं, कोई उड़ान नही, उच्च, उत्ताल, उद्दाम जिंदगी के लिए कोई इच्छा, संघर्ष नहीं ? "[4]

ज्ञान, जगन और हरदत्त के आकर्षण से अपने को मुक्त कर लेती है किन्तु अपनी कमजोरी को दूर नहीं कर पाती । वह हर एक के प्रेम का मजाक उड़ाती हैं, प्रतिभा हर एक के साथ खेलती है - जैसे बिल्ली चूहे से । यह देखकर उसके अहंम

---

2. उपेंद्रनाथ अश्क : भँवर पृ.सं. 53
3. वही वही पृ.सं. 61
4. वही वही पृ.सं. 57

की तुष्टि होती है कि अपनी एक मुस्कान या कटाक्ष से वह इतने लोगों को पागल बना सकती है । असल मे वह सब से घृणा करती है । बुध्दिवादी वृत्ति ने उसके जीवन को असंतोष से भर दिया है । इसलिए वह हर चीज से बेजार और आत्मवंचना का शिकार बन गयी है ।

नाटक का पूरा प्रभाव हमारे मानसपट पर ऐसी युवती का चित्र अंकित करता हैं जो खूब पढ़ी लिखी है, बुध्दिवादी है, पर जो जीवन में कहीं चूक गयी है । हरदत्त उसे बार-बार जीवन की राह पर लाने के लिए कोशिश करता है । हरदत्त की दो पत्नियाँ मर चूकी है । उसके पास भी घुटन है, ब्याह को निभाने की उसके पास कला भी है । परिस्थिती वश वह प्रतिभा से अधिक सहानुभूति रखता हुआ समझाता है - " देखो तीभा, नन्हीं-नन्हीं खुशियों से दूर न भागो । इन्हीं में जिन्दगी को ढूँढो । इन्हीं में तुम्हें शांति मिलेगी ।"[5] इसप्रकार बाते करते हुऐ हरदत्त प्रतिभा को आलिंगन मे आबध्द कर लेता है लेकिन वह उसे दुत्कार देती है । वह जाते - जाते कहता है - " मै जाता हूँ पर शांत मन से मेरी बातों पर सोचो ।"[6] हरदत्त प्रतिभा से कहता है कि - " हरेक आदमी अपने खौल के अन्दर महज एक बच्चा है ।" इस पर विचार और जीवन के संबंध में अनुचिंतन करती हुई प्रतिभा कहती है - " हरेक आदमी अपनी खौल के अन्दर महज एक बच्चा है क्या अपने खौल के भीतर मैं भी सिर्फ एक बच्ची हूँ - बच्ची जो चाँद को चाहती है और खिलौनों से जिसकी तसल्ली नहीं होती... लेकिन चाँद बहुत उँचा है... बहूत दूर है... नीलाभ.... नीलाभ उफ् ।"[7] इन वाक्यों के द्वारा प्रतिभा की कुण्ठा का रहस्योदघाटन होता है। इसमें प्रतिभा की मन:स्थिती का सुक्ष्म एवं मनोवैज्ञानिक विशेलषण किया है । मानव की कमजोरीयों को ढका नही जा सकता, मन की विषण्णता पर पर्दा डाल कर कभी काबू में नहीं लिया जाता वह अपने आप शब्दों के द्वारा फूट पडती है ।

---

5. अश्क भँवर पृ.संख्या 108
6. वही वही " 111
7. वही " " 223

नाटक के सारे वातावरण पर एक सहज गांभीर्य की छाया मँडराती हैं । प्रतिभा की ऐसी स्थिति का प्रभाव प्रेक्षकोंपर दया की भावना ही निर्माण करता हैं । अवकाश भोगी वर्ग की युवती की कुण्ठाओं का अश्क ने बड़ी सफलता से चित्रण किया है । बौध्दिकता और गंभीरता होनेपर भी कथानक में कही शिथिलता नहीं आयी है ।

**चरित्र - चित्रण :**

चरित्र - चित्रण की दृष्टि से ' भँवर ' एक बहुत ही सुंदर नाटक है । अवकाश भोगियों के घरों में बेकार लडकियों की उक्ताहट, फैशनपरस्ती और कुण्ठाओं का इतना यथार्थ चरित्र -चित्रण हिंदी में तो दूर, अश्क के अपने साहित्य में भी कम देखने के लिए मिलता है । भँवर की प्रतिभा का चरित्र कई विभिन्न चरित्रों के समावेश से बनाया गया है । उसमें अभिजात्य वर्ग में पलनेवाली बौध्दिक नारियों के गुण -दोषों की यथार्थ अभिव्यक्ति की है ।

**प्र ति भा :**

' वैयक्तिक - व्यतिक्रम और सामाजिक विषमताओं के कारण कभी - कभी जीवन में ऐसी ग्रंथियाँ पड़ जाती है और व्यक्तित्व में अनायास ही ऐसा उलझाव और दुरुहता आ जाती है कि औरों के लिए ही नहीं, स्वयं अपने लिए भी वह व्यक्तित्व एक प्रश्न चिन्ह् बनकर रह जाता है ।"[8] ' भँवर ' की नायिका प्रतिभा भी एक ऐसी ही पात्र हैं । प्रतिभा की मानसिक कुण्ठाओं के मूल में सेक्स की समस्या महत्वपूर्ण हैं ।

प्रतिभा 24 - 25 बरस की सुंदर युवती है । मध्यम कद, सुगठित देह, गौर वर्णिय , आँखें बरबस ही खिंचनेवाली । एम. ए. में पढ़ते समय ही उसे अपने दर्शन शास्त्र

---

8. दुष्यन्त कुमार - नाटकार अश्क - पृ. संख्या - 236

के अध्यापक प्रो. नीलाभ से प्यार हो गया था । प्रो. नीलाभ ने एक छात्रा से विवाह कर लिया था । विवाह से उन्हें कटु अनुभव मिले इसलिए वे नारी - मात्र से विरक्त हो गये । प्रतिभा को उस ओर मार्ग न मिलने के कारण उसके प्रेम की धारा अपने सहपाठी और टेनिस प्रेमी सुरेश की तरफ दुगुने वेग से बह निकली । प्रेम में असफल प्रतिभाने सुरेश से विवाह तो कर लिया लेकिन दोनों में बौध्दिक समानता न होने के कारण छः महीने के खिंचा-तानी के बाद विवाह टूट जाता है ।

' प्रतिभा ' को जीवन की सब सुख - सुविधाएँ उपलब्ध है, धनी घर की है, खूब शिक्षित है, रुपवती है और प्रशंसकों से घिरी हुई है, लेकिन बेहद ऊबी हुई है दुनिया से और अपने आप से भी । उसे न हल्का संगीत अच्छा लगता है न प्रकृति की शोभा । बाहर देखती है तो अपनी भावनाओं का आरोपण प्रकृति पर करते दिखाई देती है । अपने चारों ओर देखती है तो उसे सब घटिया, और उथला-छिछला दिखाई देता है । उसकी इस विरक्ती और असंतोष के पीछे प्रथम प्रेम की निराशा है । प्रतिभा पर नीलाभ के क्रिया-कलाप और व्यक्तित्व का प्रभाव है । प्रतिभा ने नीलाभ के व्यक्तित्व का आत्मीकरण करते हुए अपने व्यक्तित्व में बौध्दिकता का भी आरोपण कर लिया हैं । प्रतिभा ने अनुकरण भर किया है, उन्हें वह आत्मसात् नहीं कर पायी हैं । क्योंकि प्रतिभा के व्यक्तित्व में विरक्ति में आसक्ति निहित हैं । इस कारण वह बाहर से गंभीर, बुध्दिवादी लगती है लेकिन अन्दर से सामान्य लडकियों की तरह है ।

' प्रतिभा ' वास्तव में उन लोगों में से है जो दिवास्वप्न देखते है । वे अपनी कल्पना में ऐसी झूठी दुनिया निर्माण करते है जो कभी सत्य नही होती. बल्कि पूरा संसार ही उन्हें बेजान , निरस और असंतोष जनक लगता है । यही ग्रंथि प्रतिभा में बुध्दमुल हैं । अपने स्वप्नदर्शी स्वभाव से वह स्वयं अवगत है और अपनी इस कमजोरी कोस्वीकार भी करती है । सभी लोगों में अनुराग का भाव जगाती है लेकिन कमल के पत्ते की तरह,

पानी में रहकर भी पानी से ऊपर रहने का प्रयास करती है । प्रतिभा अपने जीवनसाथी की ऐसी कल्पना किये हुए है, कि जो कभी पूरी नहीं हो सकती । वह असल में अपनी कुंठा की क्षतिपूर्ति के लिए कोई उपयुक्त आलम्बन खोजना चाहती है । इसलिए वह प्रदीप, नारायण, विश्वा, नगेंद्र, हरदत्त, ज्ञान, जगन, निर्मल आदि कितने भ्रमरों को अपनी कसौटी पर कसती है लेकिन उसमें उसे एक भी पसंद नहीं आता । किसी भी नये पुरुष की चर्चा सुनती है तो उससे मिलने के लिए उत्सुक हो उठती है उसके पीछे उसकी मृगतृष्णा है । जगन को देखते ही प्रो. ज्ञान से वह सुंदर दिखाई देता है इसलिए जगन में रुचि लेने लगती है । लेकिन जल्दी ही जगन का दिमागी खोखलापन उसे अखरने लगता है फिर भी उसकी शरीरिक सुन्दरता उसे बुरी तरह झकझोर देती है । जगन के खयालों में खोने के कारण अपनी बहन प्रतिमा के भवें ठीक करने के बजाय बिगाड देती है । "दीदी तुम्हारा ध्यान किधर है" ऐसा प्रतिमा कहने पर वह कहती है कि -' तुम दोनों की जोडी अच्छी रहेगी यही सोच रही थी ।' लेकिन प्रतिमा जब शरमाकर भाग जाती है तब प्रतिभा कहती है कि - ' दोनों सुंदर और स्वस्थ है, लेकिन दिमाग से बिलकुल कोरे ।' इसका मतलब है कि प्रतिभा अगर जगन दिमाग से कोरा न होता तो उसे स्वयं वह आकाश-कुसुम बना देती ।

प्रतिभा को जीवन में जो असंतुष्टि तथा असफलता मिली है इसलिए वह यंत्रणाप्रिय ( Stadist ) हो गयी है । इसलिए वह दूसरों को जान बूझकर निराश करने, अपमानित करने और जलाने का काम करती है । दूसरों को ईर्ष्या की अग्नि में जलाने, अधिक पीडा पहुँचाने के इस फनमें प्रतिभा माहिर है । यंत्रणाप्रिय होने के कारण प्रतिभा स्त्रियों के प्रति ही नहीं, पुरुषों से भी निर्ममता से पेश आती है । किसी की प्रशंसा करके किसी की आलोचना करके, किसी की हँसी उडाकर और किसी को हँसी करने का अवसर देकर वह पुरुषों को मजबूर कर देती हैं कि वे उसके आस-पास मँडलाये । रुप-सौंदर्य के साथ बुध्दि का भी अतुल भंडार उसके पास है, इसलिए पुरुष पतंगों की तरह उसकी ओर खिंचे चले

आते है । "वे समझते है कि वह उन्हें पसंद करती है, उनसे प्रेम करती है, हालांकि वह उनसे खेलती है - जैसे बिल्ली चूहे से ।"[9] यह देखकर प्रतिभा के अहंम को तुष्टि मिलती है, कि अपनी एक मुस्कान या कटाक्ष से वह इतने लोगों को पागल बना सकती है । असल में वह सब को तुच्छ मानती हैं । उसकी नफरत साफ झलकती है लेकिन परवानों को उसकी कृपा - दृष्टि प्राप्त करने के प्रयास में मुस्कान ही दिखाई देती हैं, तेंवर नहीं ।

प्रतिभा की मृगतृष्णा का कहीं अंत नहीं है । वह शत-शत आत्मवंचनाओं की शिकार है और उनमें सबसे बड़ी बात है अपने आपको बुध्दिवादी समझना । बिडम्बना यह है कि वास्तव में उसकी प्रकृति बौध्दिकता के अनुकूल बिलकुल नहीं है । उसकी बौध्दिकता एक खौल है, जो उसने प्रो. नीलाभ के अनुकरण में चढ़ा रखा है । अंदर से उसका स्वभाव एक बच्ची जैसा है । जो चाँद को चाहती है और खिलौनों से जिसे संतोष नही मिलता । संकोचवश अपने आपको जीते - जागते लोगों से अलग रखती है । उसे जरुरत है किसी के मजबूत हाथों की, जो सपनों की रंगीत पर बेजान दुनिया से उसे बेरंग लेकिन जीती - जागती और धडकती दुनियामें खींच लाये । हरदत्त उसे इसप्रकार झकझोर देता है लेकिन दूसरे ही क्षण प्रो. नीलाभ की याद आकर उसे कृत्रिम बौध्दिकता तथा रोमान-पसन्दी के स्वप्न लोक में फिर खींच ले जाती है ।

प्रतिभा अपनी समस्त कुंठाओं तथा वंचनाओं के कारण उसका व्यक्तित्व एक भँवर का - सा है, जो केवल दूसरों को ही अपने आवर्त में फँसा कर नहीं डुबती बल्कि स्वयंभी अतुल और गहराई में डुबती चली जाती हैं । वह एक क्षण के लिए उभरने का प्रयास करती है तो दूसरे ही क्षण फिर अधोगामी आवर्तन आरम्भ हो जाता है । इसमें संदेह नहीं कि जीवन में असफलता तथा निराशा की भावना ने ही उसे किंचित अन्तर्मुखी तथा

---

9. उपेंद्रनाथ अश्क - भँवर पृ.स. 95

आत्मकेंद्रित बना दिया है, उसका असली कारण अलग ही है । वह न नीलाभ के प्रति प्रेम की असफलता है, न सुरेश से विवाह करने के कारण । सच तो यह है कि सिर्फ वह अपने आपसे प्रेम करती है । वह एक जगह अपनी सहेली नीलिमा से अपनी स्थिति के प्रतिसंतोष प्रकट करती हुई कहती है - " मैं तो इसी तरह अच्छी हूँ । बाहर की दुनिया से जितना चाहती हूँ , रस ले लेती हूँ ।, नहीं घोंघे की तरह अपने आप में मस्त पड़ी रहती हूँ । बहुत ऊब जाती हूँ तो प्रो. नीलाभ के पास चली जाती हूँ । उनके पास कुछ पल बिताने से मुझे शांति मिल जाती है ।"[10] और यह शांति इसलिए मिलती है, कि उनमें उसे अपने कल्पित व्यक्तित्व का आदर्श रुप दिखाई देता है । वह हर बार इस से छुटकारा पाने के लिए उडान भर लेती है लेकिन उसकी अवस्था उस जहाज के पंछी की तरह हो गयी है जो उड़ान भरता है पर उसे दूर तक कोई सहारा नहीं दिखाई देता तब वह थका - मूंदा पंछी उसी जहाज का सहारा विवश होकर लेता हैं । प्रतिभा की स्थिती उसी जहाज पंछी की तरह हो गई जो हर एक व्यक्ति को देखने के बाद उमंग से उड़ान भरती है लेकिन दूसरे ही क्षण उसे मालूम हो जाता है कि वह सत्य नहीं बल्कि आँखों का भ्रम था इसलिए फिर वह नीलाभ की ओर लौट आती है विवश, दुःख से कराहती हुई ' नीलाभ ... निलाभ... उफ् ।'

प्रतिभा के चरित्र के द्वारा नाटककार ने बुध्दिवादिनी और असफल प्रेमिका का चरित्र - चित्रित किया है । आज के बुध्दिवादिनी नारी में किसप्रकार निराशा, कुण्ठा और विवशता भर रही है यह दिखाना नाटककार का मुख्य उद्देश्य है । इसके साथ ही बौध्दिकता का नकाब ओढने वाले कभी सुखी नहीं हो सकते यह भी दिखाया है ।

---

10. उपेंद्रनाथ अश्क - भँवर पृ.सं. 60

ज्ञा न :

प्रो. ज्ञान प्रतिभा के बौध्दिक मित्र है । एक तरह से देखा जाए तो प्रो. नीलाभ के प्रतिरुप दिखाई देते है । उन्होंने अपने आपपर प्रो. नीलाभ के लगभग सभी गुणों को आरोपित कर रखा है और इस कारण प्रतिभा उनके प्रति आकर्षित है । प्रथम साक्षात्कार के समय हमें उनके परम बौध्दिक रुपके दर्शन होते हैं । प्रतिभा की तरह उन्हें भी जीवन कि दैनिकता तथा साधारणता के प्रति गहरी अरुचि दिखाई देती हैं । सस्ती फिल्मों का नाम सुनतेही वे नाक-भौं सिकोड लेते है या किसी दावत या पार्टीमें सामील होने की कल्पना से ही घबरा जाते है । इस संबंध में अपने विचार प्रकट करते हुए प्रतिभा से कहते हैं " मैं तो इन पार्टियों में जाकर ऊब उठता हूँ । औरतें इस बात की कोशिश करती है कि वे अपनी कुरुपता को ज्यादा-से-ज्यादा छिपा सके और मर्द इस बात की कि वे अधिक-से-अधिक ( Chivalrous ) दिखायी दें । वही खोखले शिष्टाचार, वही भोंडे मजाक, वही भद्दे फैशन । इन पर्टियों से ज्यादा बेरस और कोई चीज नही हैं ।"[11] आरंभ में प्रतिभा उनके इस बौध्दिक रुप से बेहतर प्रभावित है । वह उनके बारे में निलिमा से कहती है " वे समुच ' इन्टलैक्चुअल ' है ।.. ज्ञान साहब के साथ कभी ऐसा नही लगा की हम खाली है अथवा यों ही समय गवाँ रहे हैं । उनके दृष्टिकोण उनके वैंल्युज सब दूसरों से भिन्न है । उन्होंने स्वयं प्रो. नीलाभ से शिक्षा पायी है और मैं सच कहती हूँ नीली, कभी - कभी मुझे ऐसा लगता है कि अन्त में जैसे मैं..... मैं..... । "[12]

प्रो. ज्ञान का बौध्दिक और विरक्तिपरक रुप कितना बड़ा छलवा है इसका पत्ता शीघ्र ही लगता है। उनका मुख्य उददेश्य प्रतिभा की कृपा-दृष्टि प्राप्त करना है इसलिए

---

11. उपेंद्रनाथ अश्क - भँवर पृ.सं.73

12. वही " " 66

वे हर तरह का बहाना करते हैं । प्रो. ज्ञान प्रतिभा को पत्नी के रुप में पाने के लिए लालायित हैं । वे हर समय प्रतिभा के सामने अपना प्रेम -निवेदन करना चाहते हैं लेकिन यह बात प्रतिभा के समझ में आने के कारण वह हर बार अनजान बनकर उनकी बातों का मजाक उडाती हैं । उन्हें प्रेम-निवेदन का मौका ही नहीं मिलता हर समय प्रतिभा उनपर मात करती हैं । प्रो. ज्ञान प्रतिभा को फिर विवाह करने की सलाह देते हैं और पवित्र प्रेम की निःसारता सिध्द करने के लिए फ्राइड के मतको विस्तार से उपस्थित करते हुऐ विषय का रुख अपने ओर मोड लेते हैं ।

प्रतिभा को प्रसन्न रखने के लिए प्रो. ज्ञान सबकुछ करने के लिए तैयार हैं । उनकी बौध्दिकता का भी एक प्रयास हैं । अन्त में जब उनके धैर्य का बाण छुट जाता है तो वे अपनी बौध्दिकता का लबादा उतारकर फेंकते हैं और एकदम फिल्मी ढंग से प्रेम प्रकट करते हैं । प्रतिभा यह रुप देखकर चकित हो जाती है और कहती है - "तो क्या जगन, निर्मल और आप में क्या फर्क नही ? मैं तो आपको उन सबसे कहीं ऊँचा, कहीं योग्य, कहीं समझदार समझती थी । मैं तो आपको बुध्दिवादी मानती थी- - लेकिन मुझे क्या मालूम था कि आप भी उसी स्तर पर उतर आयेंगे । "[13] यह कहने पर वे लज्जित हो जाते हैं और प्रतिभा से क्षमा मांगते है । इसतरह प्रतिभा की दृष्टि में ही नही तो पाठकों की दृष्टि में वे हास्यास्पद बन जाते हैं ।

**ज ग न**

जगन एक ऐसे खिलाडियों का प्रतीक हैं जो शरीर से सुंदर होते हैं लेकिन दिमाग से कोरे । अपनी प्रिय खेल की प्रशंसा तथा उसे अपना कर लाभान्वित होने की हर किसी को सलाह देना जिनका व्यसन होता है । जगन क्रिकेट टीम का कप्तान है । जगन्नाथ एक नंबर का डिंग हाकनेवाला और खुशामदी युवक है ।

जगन प्रतिभा से मिलते ही घनिष्ठता बढाने का प्रयास करता है और उसे

---

13. उपेंद्रनाथ अश्क - भँवर पृ.सं 105

इंडिपेंडेट क्रिकेट क्लब ज्वाइन कर लेने की सलाह देता है । प्रतिभा इस संबंध में थोडीसी रुचि दिखाती है लेकिन वह बाद में खेल से अरुचि प्रकट करती है । लेकिन जगन अपनेही धुन में खेल के गुण गाता है प्रतिभा के हल्के इशारोंको समझ नहीं पाता । जगन के उत्साह का ठिकाना नहीं हैं । अगर उसका वश चलता तो वह प्रतिभा को खेल के मैदान में ले जाकर अपना खेल दिखाता और खेल कितना स्वास्थ्यवर्धक और रोचक होता है यह बताता । बाजार से वापस लौटते हुऐ वह रास्ते में क्लब के सेक्रेटरी से प्रतिभा को क्लब का सदस्य बनाने के बारे में बात कर आता है । प्रतिभा की छोटी बहन प्रतिमा का वह तथा-कथित प्रेमी है । वह आया था नीहार की वर्षगाँठ के लिए सामान खरीदकर ले जाने, लेकिन प्रतिभा का जादू उसपर ऐसा चलता है कि वह उसका बीना दाम का गुलाम बन जाता है । प्रतिभा के कपडे ठीक कराने के लिए दर्जी के पास चला जाता है । कर्मठता का परिचय देते कपडे झटपट ठीक करा लाता है । लेखक ने जगन के रुप में ऐसे युवकों का प्रतीक प्रस्तुत किया है । जिनका प्रेम बिलकुल सतही होता है और जहाँ जरासी चमक-दमक देखते वहाँ पागल होकर मजनू की तरह घूमते है ।

जहाँ तक प्रतिभा को प्राप्त करने की लालसा का प्रश्न है जगन और ज्ञान में कोई अंतर नहीं हैं । लेकिन जगन और ज्ञान में एक मौलिक अन्तर यह है ज्ञान दिमाग से सुंदर है और जगन दिमाग से कोरा । यही कारण है कि प्रतिभा के व्यंग्य का हल्का-सा संकेत भी ज्ञान को तिलमिला देता है, लेकिन प्रतिभा द्वारा स्पष्ट संकेत मिलने पर भी जगन के कान पर जूँ तक नही रेंगती । अपनी ही बाते आगे बढाता है खेल के लाभ और उपयोग का ही उपदेशामृत पिलाता हैं । हँसी-मजाक में नीहार की वर्षगाँठ में प्रतिभा के सामने अपना प्रेम बहुत ही सस्ते ढंग से और फिल्मी लोगों की तरह प्रकट करता है । जगन में व्यावहारिकता कुट-कुटकर भरी हुई हैं । इसका पता हमें तब लगता है कि प्रतिभा से इन्कार मिलने के बाद वह कन्दे उचकाकर प्रतिमा के पास जा पहुँचता है और बडे ही सुदर ढंग से उसे मनाता है । इस संबंध में बडी चतुराई से काम लेता है प्रतिमा को इस फिराक में रखता

है कि वास्तव में जगन हम दोनों के शादी के बारे में बात पक्की करना चाहता है और इसलिए वह दीदी पर रोब जमाने के पिछे लग गया था ऐसी उसकी भी समझ हो जाती है ।

हरदत्त :

हरदत्त एक साधारण मनुष्य हैं । उसकी दोनों पत्नियाँ मर चुकी है । प्रतिभा को चाहनेवालों में हरदत्त भी एक है । हरदत्त के व्यक्तित्व में ज्ञान और जगन के व्यक्तित्व का समन्वय दिखाई देता है । वह प्रतिभा से दस-पंद्रह बरस बडा है । हरदत्त स्वस्थ, मनमौजी तथा फक्कड होने के साथ ही बुध्दिवादी भी है लेकिन प्रतिभा उसकी बुध्दिवादिता को एक खोल समझती हैं पर जब वह हरदत्त के सामने होती है और दोनों का संभाषण चलता है तब हमें उसकी बौध्दिकताका अच्छा परिचय मिलता है ।

हरदत्त एक सुलझे हुऐ मस्तिष्कवाला व्यक्ति है । जिसने जीवन में बहुत कुछ सहकर और त्याग देकर जीवन के अनुभव और शादी की कला आजमाई है । उसमें ज्ञान और जगन की तरह आत्मविश्वास की कमी नही है । यही कारण है कि वह न ही प्रतिभा के कृपा-कटाक्ष से जीता है न उपेक्षा-दृष्टि से मरता है । उसकी दृष्टि में ज्ञान और जगन दोनों बच्चे है । प्रतिभा के व्यक्तित्व के हर उतार-चढ़ाव से वह वाकिब है । इसलिए प्रतिभा के खौल में छिपे एक-एक आवरणों को सहजता से खोलकर रखता है । और प्रतिभा से कहता भी है इसी साधारणता पर जिंदगी टिकी हुई है इससे दूर भागने की कोशिश मत करो इसी में अपना सुख ढूँढने का प्रयत्न करो । वह बिना घबराये प्रतिभा की पोल खोलता है ।

प्रतिभा तथा हरदत्त में कुछ ऐसी समानताएँ भी है जिससे वे एक-दूसरे के नजदीक आते है । उक्ताहट, घुटन और शून इन दोनों के जीवन में भरा हुआ है । इसलिए अगर इससे छुटकारा पाना है तो वह कहता है - ' मेरे साथ तुम्हें पूरी शांति मिलेगी । ' लेकिन प्रतिभा उसकी बातों को हँसी के फँवारे में उडा देती है । वह कहता है कि तुम्हें

किसी के मजबूत हाथों की जरुरत है जो तुम्हें, तुम्हारी सपनों की रंगीन पर बेजान दुनिया से, इस बेरंग पर साधारण जीती-जागती दुनिया में खींच लाये । ' इस प्रकार वह प्रतिभा को हर समय रोमान-पसन्द और बुध्दिवादी विश्व से खिंचकर लाने का प्रयास करता है । प्रतिभा जिस व्यक्ति की कामना करती हैं वह सभी गुण हरदत्त में है लेकिन नीलाभ के प्रति जो स्वप्नदर्शिता है उसीके कारण वह हरदत्त को अंगीकार नहीं कर सकती ।

**प्रो.नी ला भ :**

प्रो. नीलाभ स्वस्थ, सुंदर तथा विद्वान होने के साथ-साथ प्रबल बुध्दिवादी हैं । प्रो. नीलाभ कभी भी रंगमंच पर नहीं आते लेकिन उनका व्यक्तित्व पूरे नाटक पर छा गया है । प्रो. नीलाभ विश्वविद्यालय में दर्शन के अध्यापक थे । उन्होंने अपनी ही एक छात्रा से विवाह कर लिया था पर अनुभव इतने कटु थे कि वे स्त्री जाति से ही विरक्त हो गये । और अपना शेष जीवन अध्ययन-अध्यापन के लिए समर्पित कर दिया । इसी विरक्ति के कारण प्रतिभा में उनके प्रति आकर्षण पैदा हो गया है । प्रतिभा यौवनारंभ में ही प्रो. नीलाभ से प्रभावित हो गई थी । प्रो. नीलाभ की यही विरक्ति प्रतिभा के लिए चारे का काम करती है । प्रतिभा के प्रत्येक कार्य-व्यापार पर प्रो. नीलाभ की छाप है । वे बुध्दिवादी है, प्रतिभा ने उनके व्यक्तित्व का आत्मीकरण कर अपने व्यक्तित्व में आरोपण कर लिया है । प्रो. नीलाभ के बारे में कुछ सूचना हमें नाटककार अपने रंगमंच निर्देश के माध्यम से देता है और कुछ विभिन्न पात्रों के संभाषण द्वारा । कुल मिलाकर उनके व्यक्तित्व का चित्रांकन न होकर छायांकन सिर्फ हुआ है । इस प्रकार हमारे सामने जो एक सुंदर, स्वस्थ तथा विद्वान पुरुष का रुप उभरता है वह संभवता प्रो. नीलाभ का कम है प्रतिभा द्वारा कल्पित आदर्श पुरुष का आधिक है ।

' भँवर के शेष पात्रों का निर्माण प्रतिभा के व्यक्तित्व से संबंधित न होकर मूल वस्तु से है । वे केवल वातावरण का निर्माण करने के लिए आये हैं और एक वर्ग विशेष के

किसी 'टाईप' का प्रतिनिधित्व करते हैं । प्रतिभा के पिता अभिजात वर्ग के ऐसे व्यक्ति हैं, जिन्हें ऑफिस और फाइलों से फुर्सत नहीं मिलती । प्रतिभा की ममी इस वर्ग की गृहिणीयों का प्रतिनिधि है जो हर समय लंच और डिनर की चिंता में ही व्यस्त रहती है । नीहार और प्रतिमा संपन्न घर की उन कन्याओं का प्रतिनिधित्व करती है जो सजने-सँवरने और प्रेम करने का ही काम करती है । नीलिमा इस वर्ग की नार्मल लडकी है प्रमिला एक अल्हड किशोरी । निर्मल उन युवकों का प्रतीक है जो अपनी थोथी बहादुरी की डींग हाक कर लडकियों को प्रभावित करते है । विमल की माताजी और मिसेस गुप्ता नवदौलतियों की तरह अपनी श्रीमंती का डिड्डम पीटनेवाली में से है । पूरे नाटक में अभिजात उच्चमध्यवर्गीय लोगों का चरित्र खींचा गया है । 'भँवर' में आये सभी पात्र वातावरण को जीवंत रुप प्रधान करते है । चरित्र निर्माण की दृष्टि से यह नायिकाप्रधान नाटक है । चरित्र की दृष्टि से देखा जाय तो यह नाटक अत्यंत सफल बन गया है ।

## संवाद या कथोपकथन :

इसके लिए बहुत ही शब्दों का इस्तेमाल किया जाता है जैसे संवाद, कथोपकथन, कथनोपकथन, वार्तालाप, संभाषण आदि । निसंकोच रुप से कहा जा सकता है कि हिंदी साहित्य में इतने स्वाभाविकता के साथ सुंदर संवाद लिखनेवाला अन्य कोई लेखक नहीं होगा । पात्रों के कार्य-व्यापार की स्वाभाविक स्थिति के अनुकूल संवाद होने के कारण ही संवादों का अभिनयात्मक प्रभाव उत्पन्न हुआ है । भँवर नाटक के संवाद पात्रों की मनःस्थिति पर प्रकाश डालते है और उनके गुंथियों को सुलझाने का प्रयास करते है । फ्राईड से आक्रांत बुध्दिवादी प्रोफेसर ज्ञान एक ओर जब गंभीरतापूर्वक प्रेम के स्तरों का विवेचन करते है तो उसकी शैली निहायत संयत और संतुलीत है । किंतु मानसिक संतुलन खोकर जब वह भी औरों की भाँति प्रेम निवेदन करने लगता है तो अनायास ही उसकी ओजपूर्ण शैली मे भारी परिवर्तन आ जाता है । उसके संवाद खंडित और अव्यवस्थित से लगने लगते है, जैसे कहीं कुछ भूल

गया हो । वस्तुतः भँवर के सारे पात्र समय की अनुकूलता अथवा प्रतिकूलता देखकर चलते है उनके अंतस्थल का अन्तर्न्द्वन्द्व दिखाने का सफल प्रयास अश्क ने किया है ।

प्रतिभा :- ( वापस आकर कौच में धँसते हुए, घुटे-घुटे स्वर में ) लंच और डिनर । ममी को इसके सिवा कुछ नहीं सूझता । अभी लंच से निपटे नहीं कि डिनर की रट लगा दी । कोई वक्त हो, सैर का या आराम का, पापा दफ्तर की गाथा ले बैठेंगे और ममी लंच या डिनर की । "[14]

इन संवांदो से प्रतिभा की मनस्थिति का सुंदर चित्रण हो जाता है। लेखक ने संवांदो को नाटकीय और अभिनेय बनाने के लिए प्रायः छोटे-छोटे संवादों को लिया है ।-

प्रतिमा :- दीदी, निगोडी इस आई-ब्रो-पेंसिल का उपयोग ही करना मुझे नहीं आता । ठीक तो कर दो मेरी भवें ।

प्रतिभा :- अरे तीमा.... वाह । तुम तो ऐसे बन-सँवर रही हो जैसे नीहार की नहीं, तुम्हारी बरस-गाँठ है ।

प्रतिमा :- तुम भवें ठीक कर दो दीदी ।

प्रतिभा :- लाओ ।"[15]

इसप्रकार छोटे किन्तु प्रवाहपूर्ण संवादों के कारण नाटक की गति बढाने में सहायता होती है । अश्क ने संवादों का प्रयोग अनुपस्थित घटना या अनुपस्थित पात्र को साक्षात करने के लिए बडे स्वाभाविक ढंग से किया है । ऐसे संवाद नाटक की कथावस्तु में संजीवता लाते है । अश्क के संवादो की सबसे बडी विशेषता है उनमें यथास्थान हास्य और व्यंग्य का पुट । संक्षेप में अश्क के संवाद चुटीले, टकसाली, प्रवाहपूर्ण, मुहावरेदार, पात्र तथा समस्या के अनुकूल और चरित्र चित्रण को स्वाभाविक बनाने वाले है ।

---

14) उपेंद्रनाथ अश्क --- भँवर पृ.सं. 55

15) वही """"""""""""""""पृ.सं. 85

चरित्र-चित्रण की सफलता का अधिकांश श्रेय अश्क के अर्थगर्भित, सांकेतिक तथा चुटीले संवादों को है । ' भँवर ' का हर संवाद हीरे की तरह नगीने में जडा हुआ है । उनके संवाद कार्य-व्यापार को नयी गति प्रदान करते है । उनके संवाद पात्रानुकूल होने के साथ-साथ परिस्थिति के भी अनुकूल है । भँवर में परिस्थिति तथा पात्रों के मनोविज्ञान का भी संवादो से मनोविश्लेषण किया है । इसलिए इस नाटक के संवाद सुंदर, सुघटित, स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण बन गये है ।

**दे श, का ल, वा ता व र ण :-**

' भँवर ' नाटक में ' अश्क ' जी ने देशकाल की अनुरुपता का पूरा ध्यान रखा है । कलाकार अपने युग-प्रभाव से अछुता नहीं रह सकता । उनकी कृति युगीन-विचारधारा से प्रभावित रहती है । कथावस्तु का संबंध जिस देशकाल के साथ होगा उसके अनुसार ही नाटक में वातावरण निर्माण करने की आवश्यकता होती है । ऐसा होने से ही नाटक सदोष बनता है । नाटक में ऐसी घटनाओं का चित्रण करना पडता है जिससे अभिनय करने में सुलभता आ सके ।

1961 में लिखे गये नाटक ' भँवर ' में उच्चमध्यवर्गीय परिवार में होनेवाले घटना की ओर ध्यान आकृष्ट किया है । मध्यवर्गीय परिवार की स्थिति का पर्द उठते हो दर्शन होता है - " पर्द प्रतिभा के अपने रुम में उठता है । इसमें ड्राइंग-रुम भी है, स्टडो रुम भी है और साथ मेक-अप् के लिए सिंगार मेज भी रखी है । बैठने के लिए मूल्यवान कोंच है । पढने के लिए सुंदर मेज और कुर्सी भी रखी है । एक ओर टेलीफोन है तो दूसरी ओर रैक में चुनी हुई पुस्तकें रखी हुई है । छत पर पंखा मन्थर गति से चल रहा है ।

नाटक में केवल तीन ही दृश्य है । तीनों दृश्य के लिए इसी कमरे का इस्तेमाल किया गया है । इस नाटक में स्थल की एकता का पुर्णता से निर्वाह किया गया है । एक हो स्थलपर पूरा नाटक अभिनित होता है । समय की एकता का भी ध्यान नाटक में रखा गया है । दो-ढाई घंटे की अवधि में ही नाटक समाप्त हो जाता है । कार्य की एकता तो इसमें

सहजता से आ गयी है । पूरे नाटक में कार्य-व्यापार की सुसंगति बैठ गयी है ।

देशकाल में पात्रों की भाषा की ओर भी ध्यान रखना पडता है । अश्क जी ने इसका भी बडी चतुराई से प्रयोग किया है । उच्चमध्यवर्गीय परिवार में बोली जाने वाली सुसंस्कृत भाषा और साथ में अँग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी नाटक में किया है । पाश्चात्य प्रभाव के कारण नारियों की केशभूषा, वेषभूषा तथा फैशनपरस्ती का खुब निर्वाह किया गया है इसी कारण वातावरण में सुंदरता आ गयी है । जैसे प्रतिभा का फैशनपरस्ती में स्लीवलेस ब्लॉऊज का सिलाना प्रो. ज्ञान के सामने साडी और ब्लॉऊज पहनकर उनकी प्रशंसा पाना आदि बातों से आधुनिक जीवन में स्त्रीपर पाश्चात्य प्रभाव दिखाई देता है ।

प्रतिभा की भाषा से भी वातावरण की निर्मिति में नाटक को सहायता मिली है । प्रो. ज्ञान के साथ बातें करते हुए अँग्रेजी शब्दो का इस्तेमाल सहजता से करना तथा फ्राईड के संबंध में बातचीत करना इस से उनके अध्ययनशीलता का पता चलता है । मल्लिक साहब का फाईलों में और आफिस के कामों में उलझे रहना तथा माताजी का लंच और डिनर के बारे में परेशान रहना इससे खुब वातावरण की निर्मिति हो गयी है ।

इस नाटक में आधुनिक युवकों की स्थिति का चित्रण किया है । आधुनिक युवक किस तरह युवतियोंके पिछे पागलों की तरह घुमते है और किसतरह उसके लिए दिवाने हो जाते है इसका भी पता वातावरण द्वारा मिल जाता है । आज की स्थिति में डींग हाकनेवाले, झूठी प्रशंसा करनेवाले और युवतियों को गलत रास्तेपर ले जानेवालों की कमी नहीं है इसका संकेत नाटक के वातावरण से मिल जाता है ।

**अ भि ने य ता :-**

अभिनय नाटक का प्राण होता है । रंगमंच की उपेक्षा करके नाटक लिखना असंभव है, जो नाटककार रंगमंच को ध्यान में न रखकर नाटक लिखने का प्रयास करता है उनके नाटक के अभिनय में त्रुटियाँ आती है । व्यावसायिक रंगमंच के लिए जो नाटक लिखे

जाते है वे काव्य की दृष्टि से अधूरे लगते है । तो रंगमंच के लिए नाटक कैसे लिखे जाये ? इसका उत्तर अश्क जी ने 1939 में लिखे पत्र में जैनेंद्र जी को लिखा था । " यदि आज केवल रंगमंचपर खेले जाने वाले नाटक लिखे जाय तो कल रंगमंच भी अपनी वर्षो की नींद से जाग उठेगा । मेरा अपना विचार है कि रंगमंच को स्पुर्ति प्रदान करने का सबसे बडा साधन यह है कि ऐसे नाटक अधिक लिखे जाँए जो रंगमंचपर सुगमता से खेले जा सकें । "

नाटक की साहित्यिक उत्कृष्टता तथा अभिनेयता का कलात्मक समन्वय अश्क ने अपने नाटकों में किया है ।" अश्क ने अपने परवर्ती नाटको में पर्दो का सर्वथा बहिष्कार कर दिया है । वे चाहते है कि नाटक की सेटिंग स्थायी हो । कुछेक नाटकों को छोडकर अश्क का यही प्रयास रहा है कि नाटक एक ही सेटिंग पर खेला जा सके । भारतीच रंगमंच अभी इतना सर्व-साधन संपन्न नही है, इसलिए अश्क ने यही किया है कि सेटिंग जितने सीधे-साधे हों उतना ही अच्छा । " [16] 'भँवर' इस कसौटी पर खरा उतरता है । अश्क जी ने एक ही सेट में पूरे नाटक को अभिनित करने का सफल प्रयत्न किया है । अभिनय के द्वारा ही श्रोता चारित्रिक विशेषताओं और भावों को गहराई से समझ जाता है । नाटक पठन करने से हम पात्रों के साथ इतनी तादात्म्यता अनुभव नहीं करते जितने अभिनय के द्वारा कर सकते है । अभिनय के द्वारा ही पात्रों में यर्थाथता आती है ।

प्रस्तुत नाटक में परिस्थितिगत बोध के लिए फिल्मी गीतों को भी लिया गया है । गीत सार्थक और अपने जगह अटल है । -

" यह सावन का घन आया ।  
क्या नया संदेशा लाया ।।  
रिमझिम रिमझिम बूँदियाँ बरसें,  
नयन दरस को तेरे तरसे, साजन,  
ओ साजन । डेरा परदेश लगाया । " [17]

---

16) डा. रामकुमार गुप्त- हिंदी नाटक के प्रमुख हस्ताक्षर पृ.सं. 170  
17) अश्क भँवर पृं.सं. 56

इस गीत के माध्यम से प्रतिभा के मन:स्थिति का अंदाजा हमें सहजता से मिलता है । ' भँवर ' नाटक पूर्ण रुप से अभिनेय है । पूरा नाटक प्रतिभा के शृंगार कक्ष में ही घटित होता है । शृंगार कक्ष का उपयोग सब कार्यो के लिए किया गया है । इस में सभी पात्र कभी रंगमंचपर नही आते आवश्यकता के अनुसार दो या चार ही आते है । सभी पात्रों की अपनी महत्वपूर्ण भूमिकाएँ है । कोई दृश्य अनावश्यक या बेफजूल नहीं है और साथ में अनावश्यक संवाद भी नहीं है । नाटक में प्रो. नीलाभ कभी भी रंगमंच पर नही आते लेकिन प्रतिभा के व्यक्तित्व पर बुरी तरह से छा गये है । अश्क जी ने नारी जीवन की सूक्ष्मता को इस नाटक में प्रस्तूत किया है । " नारी के प्रति अश्क के मन में असीम श्रध्दा और अगाध वेदना है । अपने उपन्यासों, कथाओं, नाटकों में अश्क ने नारी को विभिन्न रुपों में प्रस्तुत किया है ।"[18]

**शै ली :**

एक सिध्दहस्त नाटयशिल्पी होने के साथ-साथ अश्क उपन्यासकार, लेखक और कवि भी है और उन साहित्य-रुपों के संस्कारों का सूक्ष्म प्रभाव उनके नाटय-शिल्प पर भी पडा है । अश्क के कवि का योग भी उनके कुल नाटकों में प्रचुर मात्रा में मिलता है । अश्क की शैली का सबसे बडा गुण उसकी उत्फुलता है । उनके हास्य-रस-प्रधान नाटकों में यह गुण और भी उभर कर सामने आता है । " अपनी शैली के निर्माण में अश्क ने शिल्प की दृष्टि से इन पाश्यात्य कलाकारोंसे अधिक प्रेरणा पाई है । यद्यपि उन्होंने इब्सन, चैखव, सिमानॉव, कॉफमैन , शॉ, गालसवर्दी, पिरेणडेलो आदि नये पुराने अनेक नाटककारों की कृतियों का अध्ययन किया है । किन्तु सबसे अधिक शिल्प प्रेरणा नाटकों में उन्हें मैतरलिंक, ओनील, प्रीस्टले तथा बैरी ही से मिली है । " 19

शैली में वस्तु-चयन और वस्तु-विन्यास तथा भाषा की प्रवाहमानता और टकसालीपन का बडा हाथ है । अश्क की शैली का एक बडा गुण-विशेषकर उनके गंभीर

---

18) गोपालकृष्ण कौल     नाटककार अश्क     पृ.सं. 95

19) वही     वही     पृ.सं. 112

SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR

नाटकों में उनकी प्रतीकात्मकता या सांकेतिकता है । सूक्ष्म अथवा स्थूल संकेतों और प्रतीकों के सहारे अश्क ने जहाँ बडी सफाई से वातावरण उपस्थित कर दिया है, वहाँ पात्रों के चरित्र-चित्रण में भी इससे सहायता ली है । पात्रों के मनोविज्ञान को दर्शाने, आगामी घटनाओं की सूचना देने, अस्पष्ट विचारों को प्रतीको द्वारा स्पष्टकर सामने रखना और मानव की प्रवृत्तियों की प्रतीकों की सहायता से उद्घाटन करने के साथ-साथ अश्क की नाटय शैली के इस संकेतात्मक गुण ने प्रकृति के सौंदर्य अथवा भयावहता को नाटक के मूड के अनुसार प्रयोग करने का कठिन काम किया है ।

अश्क दर्शक ही नहीं, पाठक का भी ध्यान रखते है । इसलिए अपने नाटकों की शैली उन्होंने ऐसी अपनाई है, जिससे दोनों का भी मनोरंजन हो सके । दृश्य-विधान के संकेतो का विवरण कहानीकार की तरह करते है जिसके कारण निदेर्शक और अभिनेता के लिए सहायता मिलती है । यह भी उनकी विशेषता माननी चाहिए की जीवन वैविध्य के अनुभव से प्राप्त वस्तु-सत्यों को वे रंगमंच पर अपने शिल्प चातुर्य के बलपर यथार्थता के साथ उद्घाटित करते है । जिसके कारण पाठक भी अपने जीवन की यथार्थता का किसी न किसी रूप में दर्शन पाता है । पाठक को भी उसे पढकर ऐसा ही साक्षात्कार होता है और दोनों इस प्रकार जीवन के प्रति नये दृष्टिकोण की प्रेरणा प्राप्त होती है ।

वैसे देखा जाय तो ' भँवर ' दुःखांत नाटक है । इतना धीर-गंभीर नाटक होनेपर अश्क जी ने बीच-बीच में हास्य-व्यंग्य की छीटें देकर उसकी एकरसता बचायी है । नाटक जब समाप्त हो जाता है तब हमारे मन -मष्सिक पर गहन प्रभाव छोड जाता है जिसमें प्रतिभा की विडम्बना का अवसाद भी है और अभिजातवर्ग की विडम्बना की हास्यास्पदता भी । वास्तव में भँवर गंभरी नाटक है लेकिन अश्क जी की कुशलताने उसे सहज संभव बना दिया है । " भँवर के सृजन में नाटककार ने ऐसी पिच्चकारी की है कि उसका स्वरुप हर तरफ से सुक्ष्मता पूर्वक तीराशी हुई हाथी दाँत की एक ऐसी मूर्ति का-सा बन गया है जो अपने में एक विस्मयजनक नफासत और भव्यता समेटे हुए हो । " [20] नाटक की भाषाशैली संक्षिप्त और

---

20) सुरेंद्र पाल भँवर एक विवेचनात्मक परीचय पृ.सं. 48

सुंदर है । भाषा प्रवाहमयी चुस्त, परिस्थितिअनुरुप और पात्रानुकूल बन गयी है । सुशिक्षित और नोकरों की भाषाशैली में खुब अंतर दिखाई देता है । भाषाशैली के बारे में कहा जाय तो अश्क जी का 'भँवर' अत्युत्तम कृति है ।

**शी र्ष क :-**

अश्क जी ने 'भँवर ' इस नाटय कृति का बहुत ही समर्पक नाम रखा है । किसी भी साहित्य विधा का नामकरण करते समय उसके औचित्य को ध्यान में रखा जाता है । शीर्षक में एसी समुचितता और आकर्षण होना चाहिए की उसका नाम लेते ही हमारे सामने वह दृश्य मूर्तिमान हो सके । शीर्षक का नाम पढते ही पाठक के मन में उस कृति को पढने के लिए बाध्य होना चाहिए । नामकरण में ऐसे ही प्रतिक को चुना जाता है जिसके कारण पाठक उस ओर आकर्षित हो सके । जिसप्रकार भ्रमर सब फुलों को देखता है लेकिन उसका आकर्षण खिले हुऐ श्वेत फुल पर ही जाता है उसी तरह ही पाठक का ध्यान आकृष्ट कर देनेवाले शीर्षक पर जाना चाहिए ।

नाटक तो एक दृश्य काव्य है । नाटक का आनंद तो अभिनीत होने में ज्यादा होता है । दूसरी बात यह है की नाटक के पठन से भी हमें आनंद प्राप्त होता है । इसलिए ही इसे 'नाटक काव्यषु रम्यम् ' कहा गया है । नाटक अन्य विधाओं में सुंदर है ।

नाटक का नामकरण नाटक की कथावस्तु के आधार पर किया जाता है । साथ ही नायक अथवा नायिका के नामपर या उनके आधार बनाकर भी नाटक का नामकरण किया जाता है । या कभी-कभी नाटक की महत्वपूर्ण घटना या घटना से संबधित प्रतिक भी लिया जाता है । 'भँवर' प्रतिभा के व्यक्तित्व का प्रतीक है । भँवर की प्रतिभा जीवन के जलाशय में भँवर की तरह बन गयी है । जो केवल खुद ही नहीं डूबती तो उसके साथ आवर्त में आनेवाले सब को डूबाती है । उसीतरह ही प्रतिभा अपने आस-पास आनेवाले सभी पुरुषों को अपने आवर्त में फँसाकर ले डूबती है । पुरुष भी उसके प्यार भरे जलाशय में डूबते ही चले जाते है ।

प्रतिभा जीवन भँवर में ऐसी ही घूम रही है । जो उसके आवर्त में आते है वे फँसकर ही रह जाते है । निर्मल, जगन, हरदत्त, प्रो. ज्ञान, प्रदीप, नारायण, विश्वा, नगेंद्र आदि उसके भँवर में फँस जाते है और उनको भँवर बनी प्रतिभा तहस-नहस कर देती है । प्रस्तुत नाटक को देखने के बाद उसके शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट हो जाती है । वह शीर्षक इसलिए सार्थक लगता है कि उसमें प्रतिभा के अन्तर्द्वद्व की झलक मिल जाती है । प्रतिभा का मानसिक द्वंन्द्व सागर में उठनेवाली लहरियों की तरह ही लगता है इसलिए नाटक का नामकरण यथार्थ और वास्तविक लगता है । इसके साथ ही नाटक की घटनाएँ सार्थ और सुंदर बन पडी है ।

भँवर नाटक के नामकरण में व्यंग्यात्मकता का भी पुट दिखाई देता है । हरदत्त के माध्यम से प्रतिभा के इस प्रवृत्ति पर घन-घोर चोट कर दी है । हर समय वह प्रतिभा की आत्मवंचना और बौध्दिकता का खौल तोडकर बाहर आने के लिए विवश करता है, कभी वह उससे सँभलने का प्रयास करती है लेकिन सफल नहीं हो पाती । उसी में ही अतल और गहराई में डूबती चली जाती है । 'भँवर' इस नाम से ज्यादा इस नाटयकृति के लिए और समर्पक शीर्षक हो ही नहीं सकता । ' भँवर ' नाम ही उसके लिए आकर्षक, समुचित और रोचक लगता है ।

**उ द्दे श्य :-**

किसी भी साहित्य विधा का कोई उद्देश्य अवश्य होता है । साहित्य हमारे आत्माभिव्यक्ति का आविष्कार है । साहित्य से ही 'सत्यम्, शिवम्, सुंदरम्' की निर्मिति होती है । साहित्य हमें जीवन में जीने का मार्ग दिखाता है । साहित्य हमें स्वजनों की तरह सलाह देता है । किसी भी साहित्यकृति का उद्देश्य महान और मंगल होना चाहिए । कृति हमेशा उद्देश्य को सामने रखकर ही लिखी जाती है । 'भँवर ' नाटक भी उद्देश्य पूर्ण है ।

'भँवर ' नाटक में 'अश्क' का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि प्रेम तथा विवाह के क्षेत्र में कुछ चरित्रगत कमजोरियाँ प्रबुध्द और आकर्षक नारी के जीवन को निराशा तथा

विरक्ति में किसप्रकार फँसा देता है यह दिखाया है । प्रतिभा कुण्ठाओं और आत्मवंचनाओं का शिकार बन गयी है । आत्मवंचना का शिकार बना हुआ आदमी कभी इस संसार में शांति पा नहीं सकता । प्रतिभा में असफल प्रेम के कारण मानसिक ग्रंथि बन चुकी है इसलिए वह अनेक पुरुषों को अपनी कसौटीपर कसती है लेकिन उसकी कसौटीपर कोई भी पुरुष खरा नहीं उतरता । लेखक का उद्देश्य इसमें यह दिखाना है कि दिवास्वप्न देखनेवाला कभी आनंद के साथ नहीं रह सकता वर्ना वह कल्पना की झूठी दुनिया में हमेशा मग्न रहता है । प्रतिभा में भी यही स्वप्नदर्शी स्वभाव भर गया है इसलिए उसमें तीव्र अस्तुष्टता की भावना भर गयी है । प्रतिभा के पिछे भी यही रागात्मक महत्वकांक्षा तथा वैवाहिक असफलता का कारण है ।

अश्क का उद्देश्य अपने इस नाटक के माध्यम से यह दिखाना है कि प्रेम तथा विवाह के क्षेत्र में दृष्टिकोण तथा आचरण संबंधी वे कौनसी खुमियाँ है जो प्रतिभा जैसी प्रबुध्द तथा शिक्षित नारी में पनप रही है । आज की नारी के लिए विवाह के बारें में अजादी देकर भी वह किसप्रकार गहन कुण्ठाओंका शिकार बनती जा रही है इस ओर भी लेखक ने अगाह किया है । बौध्दिकता का खोल चढाकर आज की नारी अपना वैवाहिक जीवन किसप्रकार निराशामय बना रही है यह भी दिखाने का प्रयास लेखक ने किया है । साथ ही खूब शिक्षित होने पर आदमी किसप्रकार साधारणता से भागता है । निज वस्तु में मुँह मोडता है इसका भी चित्रण इसमें किया गया है ।

इस नाट्यकृति के पीछे व्यंग्यात्मकता का भी उपयोग किया गया है । वास्तव में बुध्दिमता न होते हुए भी जो दिखावे करते है और अंतमें किसप्रकार मकडी की जाल की तरह खुद ही फँस जाते है यह भी दिखाया है । बौध्दिकता का नकाब ओढने से कोई बुध्दिमान नहीं होता उसमें यह गुण स्वाभाविक ही होना चाहिए वर्ना वह आदमी खुद ही कुण्ठा, आत्मवंचना का शिकार हो जाता है यही दिखाना नाटककार का मुख्य उद्देश्य था । प्रतिभा के माध्यम से आज के नारी के लिए उन्होंने यह संदेशा दिया है कि प्रतिभा की तरह पढ-लिखकर आत्मवंचना का शिकार न बने तो शिक्षा का सदुउपयोग करके अपना जीवन सुंदर बनाये ।

आज की सुशिक्षित नारी पाश्चात्य सभ्यता की नकल करके खुद ही बौंरा रही हैं । पाश्चात्य सभ्यता भारतीय स्त्री के लिए वरदान न होकर किसप्रकार शाप बन रहा है यह प्रतिभा के चरित्र से दिखाई देता है । आज शिक्षा के कारण स्त्री विभ्रम में फसती चली जा रही है । वह बौध्दिकता का खौल चढ़ाकर खुद को भी समझ नहीं पा रही हैं ।